

## सामाजिक परिपेक्ष्य में भाषा एवं संस्कृति

देवी, सुमन

सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, एन.आई.आई.एल.एम. विश्वविद्यालय, कैथल

### सारांश

संस्कृति शब्द अपने आप में अनेक सामाजिक संस्कारों, परंपराओं, प्रतिमानों तथा धार्मिक व आध्यात्मिक मान्यताओं को सँजोए हुए है। भारतीय संस्कृति जिसकी विश्वभर में अलग पहचान है। विदेशों में भारतीय संस्कृति, साहित्य, दर्शन, धर्म तथा जीवन मूल्यों के प्रति अगाध प्रेम के कारण अलग पहचान रखती है। भारतीय संस्कृति में विरासत व परम्पराओं का अनमोल भंडार विद्यमान हैं। किसी भी समाज की परम्पराएं वहाँ की सामूहिक विरासत है जोकि समाज में सभी स्तरों पर व्याप्त है। सभ्यता और संस्कृति में मुख्य अंतर यह है कि सभ्यता से मनुष्य की भौतिक प्रगति का पता चलता है तथा संस्कृति से मानसिक और सामाजिक उन्नति का, भारतीय संस्कृति अपने जीवन दर्शन, धर्म, रहन-सहन, ज्ञान-विज्ञान विभिन्न जातियों व वर्णों के कारण विविध व विशिष्ट रही है। हमारी संस्कृति युग की मांग के अनुसार पल्लवित हुई है। भारत पर समय-समय पर अनेक विदेशी शक्तियों ने शासन किया है तथा अपनी छाप भी छोड़ी है। हम भारतीयों ने अनेक अच्छे गुणों को ग्रहण किया है तथा उन्हें जीवन में अपनाया भी है। भारतीय संस्कृति का मूल आधार धर्म ही है। धार्मिक मान्यताएं समय-समय पर बदलती रहती हैं, परंतु उनका मूल परिवर्तित नहीं होता। आज इक्कीसवीं शदी में हम अपने मूल्यों, परंपराओं व जीवन पद्धति से मुहँ मोड रहे हैं अर्थात् जिस जीवन शैली के अनुसार हमारी प्रकृति व मनुष्य जाति का विकास हुआ है। अब वह प्राचीन पद्धति व परंपराओं को नकार कर नवीन मूल्य तथा पश्चिमीकरण की दौड़ में बह रहे हैं। युवा वर्ग को अपने प्राचीन रीति-रिवाजों व मान्यताओं में कोई दिलचस्पी नहीं है। जबकि समाज का अनुभवी वर्ग इस बात पर चिंतित है। समाज दिशाहीन होता जा रहा है।

*महत्वपूर्ण बिन्दु:* संस्कृति, विभिन्नता, समाजीकरण, भौतिकवादी, पाश्चात्य, प्राचीनतम सभ्यता, रीति-रिवाज, परम्पराएं

### **भूमिका:**

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति अति प्राचीन है। भारत अपनेआप में महान सांस्कृतिक विरासत को समाए हुए है। भारतीय संस्कृति का विकास, धर्म, अध्यात्मक, पूजा, दर्शन व चिंतन से भरपूर होने के कारण महान है। भारतीय संस्कृति समाज व युग की आवश्यकता के अनुसार पल्लवित व प्रफुल्लित हुई है। प्राचीन मान्यताओं अर्थात् वेदों पुराणों व उपनिषदों के अनुसार भारतीय समाज में सभी प्राकृतिक उपादानों को पूजा के योग्य समझा जाता था, उनकी देखभाल की जाती थी। इस संस्कृति में नदियों पर्वतों, पेड़-पौधों, पशुओं व पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता व सहजता अपनाने के साथ-साथ उनको पूजनीय माना जाता था तथा कुछ हद तक ये परम्पराएं व रीति-रिवाज आज भी व्याप्त है। 21वीं शदी में तकनीकी के इस दौर में मनुष्य अत्याधिक भौतिकवादी होता जा रहा है वह अपनी भारतीय सभ्यता व संस्कृति को भूलता जा रहा है तथा पश्चिमी सभ्यता का अनुकरण कर रहा है। आज नई व पुरानी पीढ़ी के मध्य विचारों में मतभेद होने के कारण युवा वर्ग अपने बुजुर्गों से उन मान्यताओं व परंपराओं को ग्रहण नहीं कर पा रहा है जिनका वह अधिकारी है। आज युवा वर्ग पर पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव हावी होता जा रहा है तथा वह अपनी मूल संस्कृति व परंपराओं, धर्म, भाषा व जीवन-शैली से दूर होता जा

रहा है। भौगोलिक दृष्टि से भारत विविधताओं से भरपूर है, भारतीय संस्कृति अत्यन्त सहिष्णु एवं उदार है। भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता एवं उदारता के कारण ही यह विश्व की महान संस्कृतियों में अपना प्रमुख स्थान रखती है। संस्कृति का सामान्य अर्थ है कर्मशील होना। संस्कृति का अक्षुण महत्व बताते हुए डॉ० विनोद शाही लिखते हैं- “संस्कृति की व्याख्या करने के लिहाज से हमारा दौर, अब तक की सबसे बड़ी नाकामयाबी का दौर है। वैज्ञानिक व्याख्याएं संस्कृति को नापने में नाकामयाब रही है, तो उतर- वैज्ञानिक व्याख्याएं उसे विखंडित करने में मिली कामयाबी की वजह से पैमायश की हदें ही खो देने की वजह से नाकामयाब।”<sup>1</sup>

सामान्यतः अर्थ में हम भारतीय संस्कृति उसे मानेंगे जिसमें लोकनृत्य, शास्त्रीय संगीत, साहित्य, कलाएं इत्यादि का प्रभाव परिलक्षित हो, जबकि मानव शास्त्र में संस्कृति शब्द का प्रयोग किसी समुदाय की सम्पूर्ण जीवन शैली से लिया जाता है अर्थात् किसी भी समाज के जीवन मूल्य, विश्वास, रीति-रिवाज, धर्म, पर्वों आदि की लोकप्रियता को स्थान दिया गया है। भारतवर्ष पर विदेशियों द्वारा किए गए आक्रमण के कारण भले ही हमें आर्थिक व जान-माल की क्षति हुई है, परंतु फिर भी हमने उनसे अनेक रीति-रिवाजों, भाषाओं व बोलियों को ग्रहण किया है। हमें अपनी भाषा व बोलियों में अनेक विदेशी शब्द मिल जाते हैं।

संस्कृति शब्द को परिभाषित करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी जी लिखते हैं, “मेरे विचार से सारे संसार के मनुष्यों की एक सामान्य संस्कृति हो सकती है। यह दूसरी बात है कि व्यापक संस्कृति अब तक सारे संसार में अनुभूत और अंगीकृत नहीं हो सकी है। नाना इतिहासिक परंपराओं से गुजर कर और भौगोलिक परिस्थितियों में रहकर संसार के भिन्न-भिन्न समुदायों ने उस महान मानवी संस्कृति के भिन्न-भिन्न पहलुओं का साक्षात्कार किया है। नाना प्रकार की धार्मिक साधनाओं, कलात्मक, प्रयत्नों और सेवा, भक्ति और योगमुलक अनुभूतियों के भीतर से मनुष्य उस महान सत्य के व्यापक और परिपूर्ण रूप को क्रमशः प्राप्त करता जा रहा है, जिसे हम संस्कृति शब्द द्वारा व्यक्त करते हैं।”<sup>2</sup>

हमारी संस्कृति के मूल में परम्पराएं निहित हैं। परम्परा का सामान्यतः अर्थ है किसी भी शृंखला का बिना किसी व्यवधान के जारी रहना। परम्पराएं आदर्शों, विश्वासों एवं रीति-रिवाजों के रूप में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होती हैं। परम्पराएं विशेषतः भारतीय समाज की विरासत मानी जाती हैं जो विकास के सभी स्तरों पर एक सामाजिक समूह या संगठन के रूप में विद्यमान रहती हैं। भारतीय समाज में रीति-रिवाजों, त्योहारों, मेलों, उत्सवों, पूजा-पाठ, व्रत आदि की परम्पराएं प्रारंभ से विद्यमान रही हैं। भारतीय समाज में इन

सभी परंपराओं का एक वैज्ञानिक महत्व भी रहा है जैसे वृक्षों की पूजा को हमारे पूर्वज दिनचर्या का हिस्सा मानते थे। पीपल की पूजा करने का वैज्ञानिक प्रावधान यह था कि यह में दिन-रात प्राण वायु आक्सीजन प्रदान करता है। विद्या की देवी सरस्वती का वाहन मोर को बनाया गया है, गाय को माता का दर्जा दिया गया है क्योंकि वह हमें अमूल्य उत्पाद दूध तथा औषधि के रूप में गोबर आदि प्रदान करती है, जो अनेक बीमारियों का इलाज करता है। अतः भारतीय परिवेश में खान-पान, रहन-सहन, शरीर को स्वस्थ रखने के लिए अनेक परम्पराएं विद्यमान रहीं हैं जिनका वैज्ञानिक महत्व भी रहा है। इस संदर्भ में प्रयोगवाद के प्रमुख हस्ताक्षर अज्ञेय जी लिखते हैं, “संस्कृति मूलतः एक मूल्य दृष्टि तथा उसके निर्दिष्ट होने वाले निर्माता प्रभावों का नाम है, उन सभी निर्माता प्रभावों का जो समाज को, व्यक्ति को, परिवार को सब के आपसी संबंधों को, श्रम और संपत्ति के विभाजन व उपयोग को, प्राणी मात्र से ही नहीं वस्तु मात्र से हमारे संबंधों को निरूपित और निर्धारित करते हैं। संस्कृतियाँ लगातार बदलती हैं क्योंकि मूल्य दृष्टि भी लगातार बदलती है और भौतिक परिस्थितियाँ भी लगातार बदलती हैं, लेकिन संस्कृति केवल भौतिक परिस्थितियों का परिणाम नहीं, यह अनिवार्यता भौतिक जगत और जीव जगत के साथ मानव जाति के संबंधों पर आधारित है। वह

संबंध ज्ञान के विकास व संवेदना के विस्तार के साथ-साथ बदलता है। संस्कृति उन संबंधों का निरूपण भी करती है, निर्धारण भी करती है, मूल्यांकन भी करती है और उन्ही संबंधों की अभिव्यक्ति भी है।<sup>3</sup> भाषा एक अर्जित संपत्ति है। मनुष्य की भावों अभिव्यक्ति का प्रमुख साधन भाषा ही है, यूं तो सांकेतिक भाषा को भी महत्व दिया जाता है परंतु मुख्य रूप से लिखित व मौखिक भाषा, भाषा के प्रमुख रूप हैं। भाषा से समाज को एक व्यवस्था एवं दिशा मिलती है। भाषा का प्रमुख उद्देश्य ही सामाजिक व्यवहार है, क्योंकि अकेला व्यक्ति भाषा के माध्यम से कार्य व्यवहार नहीं कर सकता। भाषा अनुकरण से ग्रहण की जाती है, कोई भी बच्चा जिस समाज में रहता है वह वहीं की भाषा ग्रहण कर लेता है। भाषा का विकास परस्पर व्यवहार से ही होता है। भाषा के सामाजिक व्यवहार को प्रतिपादित करते हुए कपिल देव द्विवेदी लिखते हैं, “भाषा का सामाजिक रूप ही प्रमुख है। सामाजिक परिवेश में आकार ही भाषा का स्वरूप निखरता है। भाषा के सामाजिक रूप को द सस्पूर ने लॉग नाम दिया है, इसके लिए अंग्रेजी टंग का शब्द परिचलित है जिसको समष्टि वाक कहा जा सकता है। विश्व की विभिन्न प्रान्तीय राष्ट्रीय भाषाएं इस श्रेणी में आती हैं। भाषा का सामाजिक पक्ष ही है, जो चिंतन होते हुए भी अद्यतन सनातन होते हुए भी नित नवीन है,

प्रतिक्षण परिवर्तित होते हुए भी अनश्वर एवं शाश्वत है। व्यक्तिगत परिवर्तन भाषा के किसी एक अंश को प्रभावित कर सकते हैं। सामाजिक पक्ष में ही आदान-प्रदान की प्रक्रिया चलती है, जिसका वर्णन ऊपर किया है।<sup>4</sup>

भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाएं शामिल है, पूरे देश में लगभग 400 भाषाएं तथा अंगिनीत बोलियाँ बोली जाती हैं। भारतवर्ष में न केवल सांस्कृतिक विविधता विद्यमान हैं अपितु भाषागत वैविध्य पाया जाता है। प्रत्येक भाषा की अपनी लिपि होती है। भाषा का रूप परिवर्तित होता रहता है अर्थात् पहले बोली फिर भाषा तथा फिर मानक भाषा अस्तित्व में आती है। हिन्दी भारत की सामान्य भाषा, राज भाषा, राष्ट्र भाषा तथा मानक भाषा के रूप में प्रचलित है। हिन्दी का विकास अनेक बोलियों से हुआ है। अतः किसी भी समाज की राजभाषा या साहित्यिक भाषा वहाँ की सामान्य भाषा होती है तथा फिर आवश्यकता महसूस होती है तो प्रत्येक देश की अपनी मानक भाषा। भाषा का लिखित रूप व्याकरण के नियमों में बंधकर स्थिर हो जाता है अर्थात् मानकीकरण का अर्थ है, भाषा के रूप में एकरूपता लाना। मानक भाषा के संदर्भ में रामविलास शर्मा लिखते हैं, “जिसे मानक भाषा कहा जाता है, वह आधुनिक समाज में जातीय भाषा है, इस जातीय भाषा के अनेक रूप हो सकते हैं,

पुरानी लघु जातियों की भाषाएं विद्यमान हो सकती हैं। दक्षिणी जातीय भाषा हिन्दी की एक बोली है। कलकातिया हिंदवी, बंबईया हिन्दी जातीय भाषा के दो रूप हैं। इनमें भिन्न कोटी में ब्रज भाषा, अवधि, भोजपुरी आदि पुरानी लघु जातियों की भाषाएं हैं। जो अब जातीय भाषा हिन्दी की उपभाषाएं अथवा बोलियाँ बन गई हैं।<sup>5</sup>

भारतीय संस्कृति प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है। सिंधु घाटी के विवरणों से पता चलता है कि आज से लगभग 5000 वर्ष पूर्व भारत में उच्च कोटी की संस्कृति विकसित हो चुकी थी। सामाजिक परंपराओं से संस्कृति के अस्तित्व का पता लगाया जाता है। भारतवर्ष में अनेक त्योहारों का प्रचलन रहा है। प्रत्येक त्योहार किसी न किसी आध्यात्मिक मान्यता व वैज्ञानिक तथ्य से संबंधित रहा है। भारत में प्राकृतिक उपादानों की पूजा करना अर्थात् पेड़-पौधों, नदी-तलाबों, जीव-जंतुओं के प्रति आदर व सम्मान भावों को प्रदर्शित किया गया है। हिन्दू धर्म में प्राकृतिक जीवन, समाज के प्राणियों के कल्याण पर जोर दिया गया है। हिन्दू धर्म भारतीय जीवन पद्धति में नीरस व फीके जीवन में रीति-रिवाजों के माध्यम से ऊर्जा का संचार करने का कार्य किया जाता है।

त्योहार, रीति-रिवाज, पहनावा: भारतवर्ष विविधताओं का देश है। यहां विभिन्न धर्मों एवं

संस्कृतियों के लोग निवास करते हैं। प्रत्येक राज्य में हमें अलग-अलग रीति-रिवाजों एवं त्योहारों का प्रचलन देखने को मिलता है। किसी भी समाज की संस्कृति उस समाज द्वारा दीर्घ काल से अपनाई गई उपलब्धियों का परिणाम है। मनुष्य के सांस्कृतिक क्रिया-कलापों से सभ्यता का विकास होता है। संस्कृति के अभाव में सभ्यता का अस्तित्व नहीं। हिन्दू धर्म में त्योहारों को मनाने की अलग पद्धति है अर्थात् हिन्दू धर्म में व्रत, पूजा, पाठ, दान करना तथा आरती कथा आदि पद्धतियों के माध्यम से मिल-जुलकर त्योहार मनाए जाते हैं। सिख धर्म के समस्त नियमों का संकलन गुरुग्रंथ साहिब में किया गया है, जो सिखों का पवित्र धार्मिक ग्रंथ है। जैन धर्म के रीति-रिवाज, जैन तीर्थकरों के जीवन चरितों से संबंधित हैं। ईसाई धर्म में भी क्रिसमस व गुड़ फ्राइडे को बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। बौद्ध धर्म में भगवान बुद्ध की पूजा की जाती है अर्थात् उनके आदर्शों को याद किया जाता है। प्रत्येक धर्म में सभी त्योहारों का अपना महत्व होता है। भारतवर्ष में सभी त्योहार भारतीय संस्कृति का गौरव माने जाते हैं। अतः हम सबका यह कर्तव्य बनता है कि हम निजी स्वार्थ को त्यागकर आपसी प्रेम व देश प्रेम की भावना को प्राथमिकता दें तथा सभी त्योहारों व रीति-रिवाजों को प्राथमिकता दें तथा सभी त्योहारों व रीति-रिवाजों का आनंद प्रदान करना चाहिए। अतः भारतीय

संस्कृति व परम्परा में रीति-रिवाजों व धर्मों का अपना महत्व है। समय के साथ-साथ लोगों के आचार व्यवहार, रीति-रिवाजों, परंपराओं आदि में परिवर्तन होता रहता है अर्थात् संस्कृति भी परिवर्तनशील हैं। संस्कृति की परिवर्तनशीलता पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुए राहुल सांकृत्यायन जी लिखते हैं, “संस्कृति वस्तुतः देश-जात से संबंधित है, धर्म के साथ उसका नाता जोड़ना गौण रीति से ही हो सकता है। जाति के साथ संस्कृति या संस्कार का संबंध वैसे ही है जैसे नये घड़े में घी या तेल भरकर कुछ दिन रखकर उसे निकाल देने पर घड़े के भीतर प्रविष्ट स्नेह का अंश बचा रहता है। एक पीढ़ी आती है वह अपने आचार-विचार, रुचि-अरुचि, कला-संगीत, भोजन-छाजन या किसी और दूसरी आध्यात्मिक धारणा के बारे में कुछ स्नेह की मात्रा अगली पीढ़ी के लिए छोड़ जाती है। एक पीढ़ी के बाद दूसरी, दूसरी के बाद तीसरी और आगे बहुत सी पीढ़ियां आती जाती हैं और सभी अपना प्रभाव व संस्कार अपने से अलग पीढ़ी पर छोड़ती जाती हैं। यही प्रभाव व संस्कार संस्कृति है, किन्तु संस्कृति भी सर्वदा अचल नहीं होती। दुनिया में कोई चीज स्थिर तथा अचल नहीं है, फिर संस्कृति कैसे उसका अपवाद बन सकती है? जिस प्रकार व्यक्ति के मानस-पटल पर पुराने अनुभव स्मृति के रूप में अवशिष्ट रहते हैं और समय आने पर स्मृतियां भी धूमिल हो जाती हैं, वैसे ही पूर्वजों से चले आते

हमारे संस्कार धूमिल होते हैं, रूपांतरित होते हैं, तो भी प्रति पीढ़ी के संस्कारों का प्रवाह कुछ अपनी विशेषता या व्यक्तित्व रखता है। काशी तक पहुँचने में गंगा वही जल नहीं रह जाता, जो गंगोत्री में देखा जाता है, तो भी गंगा का अपना महत्व है।”<sup>6</sup>

भारतवर्ष में न केवल धर्म, जातियों व त्योहारों, रीति-रिवाजों के स्तर पर विभिन्नता पाई जाती है अपितु खान-पान व पहनावों के स्तर पर भी विभिन्नता पाई जाती है। किसी भी क्षेत्र का खान-पान वहाँ की जलवायु एवं पैदावार पर निर्भर करता है। भारतवर्ष के सभी राज्यों में अन्य देशों के मुकाबले वनस्पति सब्जियों व खाद्य पदार्थों की प्रचुरता है। व्यंजनों का चुनाव भी समय व वातावरण के अनुसार किया जाता है। सभी विविधताओं के बावजूद भाषा, संस्कृति व समाज का अटूट संबंध है। इन तीनों तत्वों का आपसी सामंजस्य आवश्यक है। भाषा के स्तर पर एकरूपता स्थापित करते हुए तथा हिन्दी उर्दू के आपसी संबंध को दृष्टिगोचर करते हुए प्रेमचंद जी लिखते हैं, “मेरे ख्याल में हिन्दी और उर्दू दोनों एक जुबान हैं। क्रिया और कर्ता, फेल और फाइल, जब के है, तो उनके एक होने में कोई संदेह नहीं हो सकता। उर्दू वह हिन्दुस्तानी ज़बान है, जिसमें फारसी-अरबी के लफ्ज़ ज्यादा हों, उसी तरह हिन्दी वह हिन्दुस्तानी है जिसमें संस्कृत के शब्द ज्यादा हों, लेकिन जिस तरह अंग्रेज़ी में चाहे लैटिन या ग्रीक

शब्द अधिक हो या एंग्लोसेक्सन, दोनों ही अंग्रेजी हैं, उसी भांति हिन्दुस्तानी भी अन्य भाषाओं के शब्दों में मिल जाने से कोई भिन्न भाषा नहीं हो जाती। साधारण बातचीत में तो हम हिन्दुस्तानी में व्यवहार करते ही हैं।<sup>7</sup>

लोक संस्कृति पर विचार करते हुए श्यामाचरण दूबे लिखते हैं, “नगरीकरण की प्रक्रिया ने लोकसंस्कृतियों को पूरी तरह विश्रंखल और विनष्ट तो नहीं किया पर उनके स्वरूप और गठन में महत्वपूर्ण बदलाव अवश्य आए। नगर और ग्राम संस्कृतियों का सहअस्तित्व बना रहा और संसार के कई भागों में उनके सावयवी संबंध विकसित हुए। कस्बाई और छोटे नगरों की संस्कृति, ग्रामीण संस्कृति से बहुत अलग नहीं थी। नगरों और महानगरों के जीवन में भी लुके-छिपे लोकसंस्कृति के कुछ तत्व बने रहे। औद्योगिकीकरण ने लोकसंस्कृतियों और लोककलाओं के सामने एक नई चुनौती प्रस्तुत की। इसके प्रभाव से लोकसंस्कृतियाँ लुप्त तो नहीं हुई पर उन्हें एक नई उभरती संस्कृति से अपना एक अनुकूलन करना पड़ा। आधुनिकीकरण की आंधी ने लोकसंस्कृतियों और लोककलाओं को बुरी तरह झकझोरा। सामूहिकता के हास, विशेषीकरण के उदय और जीवन के पक्षों के अंतरावलंबन के बदलते स्वरूपों ने लोकसंस्कृति के प्रकार्यों को ही बदल दिया।<sup>8</sup>

भाषा एक सामाजिक संपत्ती है। जिसका प्रयोग मनुष्य विचार-विनिमय अर्थात अपने भावों को व्यक्त करने तथा दूसरों के विचारों को समझने के लिए करता है। भाषा के वैशिष्ट्य को स्पष्ट करते हुए उदय नारायण तिवारी लिखते हैं, “भाषा मनुष्य के प्रतीकात्मक कार्यों का प्राथमिक एवं बहुविस्तृत रूप है। इसके प्रतीक ध्वनि-अवयवों से उत्पन्न ध्वनि अर्थात ध्वनि समूहों से बने होते हैं एवं विभिन्न वर्गों तथा आकारों में इस प्रकार सँजोय हुए रहते हैं कि उनका संयुक्त एवं सुडौल आकार बन जाता है।<sup>9</sup> मानक भाषा के स्वरूप को परिभाषित करते हुए श्यामसुंदर दास जी लिखते हैं, “कई विभाषाओं में व्यवद्रत होने वाली एक शिष्ट परिगृहित विभाषा ही मानक भाषा कहलाती है।<sup>10</sup>

निष्कर्ष: भौगोलिक दृष्टि से भारत विविधताओं का देश है। सांस्कृतिक रूप से एक इकाई के रूप में इसका अस्तित्व प्राचीनकाल से बना हुआ है। भारतीय संस्कृति व परम्पराएं विविधता से परिपूर्ण है। भारतीय संस्कृति में व्याप्त सहिष्णुता की प्रवृति ने स्थायित्व प्रदान किया है। भारतीय संस्कृति में ग्रहनशीलता की प्रवृति पाई जाती है। भौगोलिक विविधता के पश्चात ही एक सांस्कृतिक इकाई के रूप में इसका अस्तित्व है। भारतवर्ष में आर्थिक व सामाजिक विभिन्नता के साथ-साथ सांस्कृतिक विभिन्नताएँ भी व्याप्त हैं। यहां भाषाओं, रीति-

रिवाजों, आचार व्यवहार, त्योहारों, नृत्य संगीत सभी स्तरों पर विभिन्नता के बावजूद भी एकता व्याप्त है। हिन्दू धर्म में सादा जीवन अर्थात् प्राकृतिक जीवन व मानव कल्याण का विशेष महत्व है। विविधता में एकता भारतीय संस्कृति की पहचान है। यहां मानवीय मूल्यों व नैतिक मूल्यों का पालन करना सभी मनुष्य अपना धर्म समझते हैं। भारतीय सभ्यता व संस्कृति को चिरकाल तक जीवंत रखने के लिए पाश्चात्य सभ्यता के अनुकरण को रोकना अति आवश्यक है, तभी हम अपनी संस्कृति को कायम रख सकेंगे तथा समाज को उन्नति की तरफ ले जा सकेंगे। निष्कर्ष भारतीय संस्कृति एवं परम्पराएं राष्ट्रीय गौरव की परिचायक हैं।

### संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. इतिहासबोध (संस्कृति: कल, आज और कल) संपादक-लाल बहादुर वर्मा, पृष्ठ संख्या 16
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी, अशोक के फूल, 18वां संस्करण, 2007, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ संख्या 68
3. सच्चिदानंद हीरानंद अज्ञेय, केंद्र और परिधि, नैशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 23

4. भाषा विज्ञान एवं भाषा शास्त्र - डॉ० कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2019, पृष्ठ संख्या 42
5. रामविलास शर्मा, भाषा और समाज, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृष्ठ संख्या 47
6. वागर्थ पत्रिका, मार्च 2008, मासिक, अंक 152 शीर्षक - देश, संपादक एकांत श्री वास्तव, कुसुम खोमानी, भारतीय भाषा परिषद, कोलकाता
7. बतकही सयुक्तांक, 2-3 जून, प्रधान संपादक अमित एस परिहार, पृष्ठ संख्या 101
8. श्यामाचरण दुबे, समय और संस्कृति, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृष्ठ संख्या 75
9. उदय नारायण तिवारी, भाषाशास्त्र की रूपरेखा, पृष्ठ संख्या 35
10. श्याम सुंदर दास, भाषा विज्ञान, हिन्दी बुक सेंटर, नई दिल्ली, 2019, पृष्ठ संख्या 29

Received on Aug 03, 2025

Accepted on Sep 15, 2025

Published on Oct 20, 2025

*सामाजिक परिपेक्ष्य में भाषा एवं संस्कृति* © 2025  
सुमन देवी द्वारा CC BY-NC-ND 4.0 लाइसेंस के तहत प्रकाशित है।